करते हैं। तथापि कालान्तर में निर्लज्ज, अविवेकी भाष्यकारों के निहित स्वार्थवश गीता का मूल प्रयोजन छिन्न-भिन्न हो गया। इसलिए शिष्यपरम्परा को पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता उपस्थित हो गई। पाँच हजार वर्ष पहले स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण को अनुभव हुआ कि शिष्यपरम्परा पूर्णतया विश्रृंखल हो गई है। इसी से उन्होंने घोषित किया कि गीता का प्रयोजन नष्टप्राय हो गया। ऐसे ही वर्तमान समय में गीता के अनेक संस्करण उपलब्ध हैं, किन्तु इनमें से प्रायः एक भी प्रामाणिक शिष्यपरम्परा का अनुगमन नहीं करता। विभिन्न लौकिक विद्वानों ने अगणित भाष्यों की रचना की है; परन्तु उनमें से प्रायः सभी श्रीकृष्ण को भगवान् स्वीकार नहीं करते, यद्यपि श्रीकृष्ण की वाणी के आधार पर ही वे अच्छा व्यापार कर लेते हैं। यह आसुरभाव है; क्योंकि वे श्रीभगवान् की सम्पत्ति का उपभोग तो करते हैं, पर उन में विश्वास नहीं रखते। अतएव जगत् को शिष्यपरम्परा से प्राप्त हुए गीता के प्रामाणिक संस्करण की बड़ी आवश्यकता है। इस महती आवश्यकता की पूर्ति के लिए ही प्रस्तुत संस्करण को प्रकाशित किया गया है। भगवद्गीता को यथारूप में अंगीकार करना मानवता के लिए परम कल्याणकारी है; उसे एक मनोधर्ममय रचना समझकर ग्रहण करने से तो केवल समय का अपव्यय ही होगा।

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्।।३।।

सः=वह; **एव**=ही; **अयम्**=यह; **मया**=मेरे द्वारा; **ते**=तेरे से; **अद्य**=आज; **योगः**=योग-विज्ञान; **प्रोक्तः**=कहा गया; **पुरातनः**=अति प्राचीन; **भक्तः**=दयित **असि**=(तू) है; **मे**=मेरा; **सखा**=मित्र; **च**=भी; **इति**=अतः; **रहस्यम्**=रहस्य है; **हि**=निःसन्देह; **एतत्**=यह; **उत्तमम्**=दिव्य।

अनुवाद

वही प्राचीन योग मैंने आज तेरे से कहा है, क्योंकि तू मेरा भक्त और प्रिय सखा है, अतएव इस विज्ञान के दिव्य रहस्य को हृदय में धारण कर सकता है।।३।।

तात्पर्य

मानव की भक्त और असुर—ये दो कोटियाँ हैं। श्रीभगवान् ने इस परमोच्च विज्ञान के श्रोता के रूप में अर्जुन का वरण किया क्योंकि वह भगवद्भक्त था। असुरों के लिए यह उत्तम रहस्यमय विज्ञान सर्वथा दुर्बोध्य है। ज्ञान के इस अनुपमेय ग्रन्थ के अनेक संस्करण उपलब्ध हैं। उनमें से कुछ भक्त-विरचित भाष्य हैं और कुछ में असुरों की टीकाएँ हैं। वास्तव में भक्तों की व्याख्याएँ ही यथार्थ हैं। इसके विपरीत, असुरों के भाष्य सर्वथा निरर्थक हैं। अर्जुन श्रीकृष्ण को साक्षात् स्वयं भगवान् मानता है। अतः अर्जुन के चरणचिह्नों का अनुसरण करने वाली गीता की व्याख्या ही इस परम विज्ञान की सच्ची सेवा है। दुर्भाग्यवश आसुरभावापन्न भाष्यकार श्रीकृष्ण के सम्बन्ध में मनोकल्पना कर जनता और पाठकवर्ग को श्रीकृष्ण की शिक्षा के पथ से